साहित्य, समाज, संस्कृति और कलाओं पर केन्द्रित

अंक 196
जून 2019
पृष्ठ 104

www.jnanpith.net

अनुक्रम

ज्ञानेन्द्रपति

लीलाधर मंडलोई

मंगलेश डबराल

रवीन्द्र वर्मा

बसन्त त्रिपाठी

तृष्णा बसाक

यह समय

अकबर और अमीर खुसरो : मधुसूदन आनन्द / 04

चिट्ठियाँ

पाठकों की प्रतिक्रिया / 06

कथा-कहानी

आर पार : बसन्त त्रिपाठी / 8
कुल्फी : अशोक कुमार / 13
राशन कार्ड : वन्दना देव शुक्ला / 17
पुनर्जन्म : रविन्द्र आरोही / 22
नैहर छूटल जाए : रश्मि शर्मा / 25
तारीफ़ : वन्दना बाजपेयी / 31

बांग्ला कहानी

पानीबाई : तृष्णा बसाक / 36

पंजाबी कहानी

जानने की चाह : डॉ. जगजीत बराड़ / 43

कविताएँ

ज्ञानेन्द्रपति / 48
लीलाधर मंडलोई / 50
संजय कुन्दन / 52
श्रीप्रकाश शुक्ल / 54
ज्योति चावला / 56

रूसी कहानी

ज़िले का डॉक्टर : इवान एस. तुर्गनेव / 58

जापानी कहानी

मोती : युकिओ मिशिमा / 63

क्लासिक कहानी

दुख : अन्तोन चेखव / 69

यात्रा-वृत्तान्त

ग़ैर-सफ़री के सफ़र : मंगलेश डबराल / 72

संगीत और संगीतकार

सिद्धेश्वरी देवी का संगीत : यतीन्द्र मिश्र / 78

स्मृति शेष

हरिपाल त्यागी एवं बिरहा गायक हीरालाल : राजेन्द्र शर्मा / 80

निन्दक नियरे राखिए

मीडिया की कड़ाही में राष्ट्रवादी पकौड़े : मुकेश कुमार / 83

लेख

कबीर के बहाने : रवीन्द्र वर्मा / 84
फ़िल्मों में महात्मा गाँधी : प्रदीप सरदाना / 86
उम्मीदों का मृत्युलेख : प्रमथ्यू गाथा : गौरी त्रिपाठी / 89

समीक्षा

साहित्य सेवियों के आडम्बरों... : श्यामसुन्दर पांडेय / 92
मीरा और उनका लोक : गणपत तेली / 95
पालतू बोहेमियन : उम्मीदें जगाती किताब : सुधांशु गुप्त / 97
कविता की रचनाधर्मिता : सुधा उपाध्याय / 98
हमारा कथा-रचना समय : सुधांशु गुप्त / 101

समानान्तर / 103

साहित्यिक-सांस्कृतिक हलचल / 104

उम्मीदों का मृत्युलेख : प्रमथ्यू गाथा

गौरी त्रिपाठी

जन्म : 18 अक्टूबर, 1985।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में एमए और फिर वहीं से शोध करते हुए ही पत्र-पत्रिकाओं में लेखन। लगभग बीस-बाइस साहित्यिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। लगभग आठ वर्षों से डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय में हिन्दी अध्यापन। पुस्तक 'तुलसी का वर्तमान सन्दर्भ' प्रकाशित। 'कविता समय' नाम से हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की श्रेष्ठ कविताओं का सम्पादन। कविताएँ समय-समय पर प्रकाशित।

मो.: 9452206059

मिथक इतिहास नहीं होते। कुछ लोग इतिहास को समझने के लिए मिथकों का उपयोग करने के लिए उनकी तरह तरह से व्याख्याएँ करते हैं, इसमें उन्हें भले ही आंशिक सफलता मिलती रही हो तब भी इसमें अनर्थ की गुंजाइश ज्यादा रह सकती है, क्योंकि मिथक के स्रोत कभी भी विशुद्ध इतिहास न होते। वे लोक आकांक्षा को लेकर रचे गये समष्टि की सृजनशीलता होते हैं, जो इतिहास को रचते हैं। मात्र उनके ऐतिहासिक सन्दर्भ होते हैं। मिथक कभी भी इतिहास की तरह मात्र एक कालखंड में भी घटित न होते, न साहित्य की तरह किसी एक स्थान या एक विशेष समय में रचे जाते हैं। कहा जा सकता है कि चाहे इतिहास की कोई घटना विशेष हो या कोई भी साहित्य उसकी तुलना में मिथक की अनुगूँज बहुत दूर तक, एक तरह से कालातीत होती है। इनके भीतर कई संस्कृतियाँ, कई देशों की सीमाओं का अतिक्रमण भी हो जाया करता है। सभ्यताओं तक के विमर्श इन मिथकों में सम्भव होते रहते हैं। यही कारण है कि समकालीन जीवन सन्दर्भों के चित्रण के लिए ये मिथक यथार्थ से भी ज्यादा साहित्य और कला का प्रभावी आधार बनते रहे हैं। इन मिथकों के कई स्रोत होते हैं। इतिहास, पौराणिक कथाओं से जुड़े पात्र। स्रोत की व्यापकता के आधार पर ही मिथकों का प्रभाव भी बढ़ता घटता है।

'कामायनी' अपने आप में मिथक काव्य है, जबकि उसके सारे चरित्र मात्र प्रतीक भर बनकर रह गये। कौन सा मामूली पात्र भी मिथक बन जाएगा और कौन बहुत ज्यादा प्रभावशाली होने के बावजूद मिथक नहीं बन पाएगा, इसके ढेर सारे कारण हैं। साहित्यिक जमात के भीतर शरतचन्द्र की एक बेहद मामूली प्रेम कहानी का पात्र 'देवदास' मिथक बन जाता है। प्रेमचन्द की कहानी कफ़न के 'घीसू-माधव' एक विशेष स्वभाव के लिए मिथकों की तरह प्रयुक्त होने लगे, जबकि महाकाव्यात्मक कृति कहे जाने वाले गोदान के प्रबुद्ध पात्र मालती मेहता नहीं। मूल रचना के वृत्तान्त जैसे जैसे क्षीण होते जाते हैं, मिथक की रचनात्मक सम्भावना में विस्तार होने लगता है। मूल वृत्तान्त के बचे रहने तक मिथकों की रचनात्मक सम्भावना लगभग नगण्य होती है। मिथक के आसपास एक ऐसी फैंटेसी होती है जिसमें यथार्थ के कई रूप अलग अलग समयों में देखे जा सकते हैं। किसी भी वृत्तान्त का पात्र जब अपनी स्वतन्त्र पहचान बनाता हुआ मूल वृत्तान्त के कथा तत्त्वों से मुक्त हो जाता है तब उसके मिथक बनने की प्रक्रिया पूरी होती है।

अचानक ऐसा क्या होता है कि आजादी के तत्काल बाद कुछ बेहद महत्त्वपूर्ण काव्य रचे जाते हैं और इनके लिए मिथकों का सहारा लिया जाता है। गिरिजा कुमार माथुर ने एक नाटक लिखा था—'पहला राजा'। रामधारी सिंह दिनकर ने युद्ध और हिंसा की आलोचना में 'कुरुक्षेत्र' लिखा। 'रश्मिरथी' का प्रसंग थोड़ा भिन्न है, मैं यहाँ 'उर्वशी' और उसके निहितार्थों का भी जिक्र नहीं करूँगी, क्योंकि बात का सिरा छूट जाएगा। लेकिन आप देखें कि किस तरह मिथकीय साहित्य का भरा पूरा परिदृश्य उस समय बन रहा था। धर्मवीर भारती ने लगभग उसी कुरुक्षेत्र की पृष्ठभूमि पर 'अंधायुग' जैसी कालजयी कृति की रचना की थी। यह सब उसी हिन्दी में हो रहा था जहाँ प्रेमचन्द ने अभी थोड़े दिन पहले यथार्थवाद की एक बड़ी परम्परा खड़ी की थी। और यह सिर्फ हिन्दी में ही नहीं, बांग्ला में प्रमनाथ विशी ने 'पूर्णावतार', विष्णु दे ने 'स्मृति सत्ता भविष्यत' लिखा तो मराठी में शिवाजी सावन्त ने कर्ण को लेकर 'मृत्युंजय' जैसा उपन्यास लिखा। आजादी के दस साल बाद लगभग इसी दौर में धर्मवीर भारती ने एक लम्बी कविता लिखी 'प्रमथ्यूगाथा'। ग्रीक मैथालाजी के अतिपरिचित नायक प्रमथ्यू को लेकर रोमैंटिक दौर के महत्त्वपूर्ण कवि शेली ने भी 'प्रोमेथियस अनबाउंड' कविता लिखी थी। मैंने उस कविता को पढ़ा नहीं, सिर्फ उसके बारे में सुना भर है, वह भी इस तरह कि यूनान का यह मिथकीय चरित्र तब मार्क्स को भी बहुत प्रभावित और आकर्षित कर रहा था। उन्होंने उसे सर्वहारा क्रान्ति के नायक के रूप में बताया था। नायक, जो इतिहास की गति को मोड़ते हैं,